International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 10-08-2023, Accepted: 28-08-2023, Published: 12-09-2023
Volume 5, Issue 3, 2023, Page No. 8-11

आधुनिक कथाकारो के उपन्यासों में नारी चेतना

रीना मेवाड़ा, तबस्सुम ख़ान
हिन्दी विभागाध्यक्ष, श्री सत्य साईं विश्वविद्यालय पचामा, सीहोर, मध्यप्रदेश, भारत

सारांश
मनोवैज्ञानिक अध्ययन की आधार भूत सामग्री फ्रायड के मनोविश्लेषण संबन्धी सिद्धान्त रही है। फ्रॉयड के अनुसार मानव–मन के अन्दर कुछ शक्तियाँ दबी पड़ी है जो मानव के मस्तिष्क में संघर्षशील स्थितियाँ उत्पन्न करती है। मनुष्य के नित्य प्रति के साधारण क्रिया.कलाप के पीछे चेतन मन कार्यरत रहता है । इस चेतन–मन के भीतर भी मनुष्य की अतृप्त, दबी हुई भावनाएँ, वासनाएँ तथा अन्य शक्तियाँ छिपी होती है और निरन्तर संघर्ष करती है उनसे अचेतन मन बनता है। चेतन एवं अचेतन के बीच एक और भाग है, उसकी स्थिति अर्द्धचंतन के रूप में हैं। फ्रॉयड की मान्यता है कि अवचेतन मन में स्थित इच्छाएँ, वासनाएँ तथा भावनाएँ, सामाजिक अथवा अन्य भय से खत्म नहीं हो पाती क्योंकि मनुष्य का चेतन मन उन्हें दबाने की कोशिश करता है। फलस्वरूप ये दमित इच्छाएँ तृप्ति के लिए सक्रिय होने का प्रयत्न करती हैं। फ्रॉयड ने इस मूल शक्ति का आधार व्यक्ति के दमित काम को माना है। सेक्स की मनोग्रंथि व्यक्ति के अन्तर्मन तथा व्यक्तित्व को प्रभावित करती है और साथ–साथ क्रोध, क्लेश, ईर्ष्या, करुणा तथा मालिन्य आदि अनेक मनोविकारों को प्रज्वलित करती है। काम–वासना के दबने से व्यक्ति के मन में अनेक कुण्ठाएँ उत्पन्न होती है जो व्यक्ति के विकास में बाधाएँ खड़ी करती हैं। फ्रॉयड की यह भी मान्यता है कि जन्म से लेकर मृत्यु तक काम प्रवृत्ति ही मानव.मन का संचालन करती है। फ्रॉयड ने इसे लिबिडोश् कहा है। लिबिड़ोश ऐसी काम.शक्ति है जिसका सम्बन्ध फ्रॉयड ने आत्म–प्रेम, रति प्रेम, माँ–बाप का प्रेम, बच्चों का प्रेम, मंत्री, स्वाभाविक आकर्षण, ममता, सहानुभूति एवं अमूर्त, वस्तुओं के प्रति श्रद्धा आदि बातों से जोड़ा है। यह काम शक्ति अहम, इद्म, अति अहम की अवस्थाओं में कार्यरत रहती है।

मूल शब्दः मनोवैज्ञानिक, कार्यरत, मनोविश्लेषण

अन्तर्द्वन्द्व और कुंठा के शिकार सुषमा

आधुनिक चेतना से संपन्न भारतीय नारी का समाज में स्वतंत्र स्थान है। उच्च शिक्षा प्राप्त कर आज उसके दुर्बल कंधों ने आगे बढ़कर पुरुषोचित बोझ को भी उठा लिया है। कल तक वह घर की चारदीवारी तक ही सीमित थी और पिता, पुत्र या पति के लिए बोझ समझी जाती थी। आज वह अपने पैरों पर खड़ी हो रही है और पिता, पति या पुत्र के आर्थिक बोझ को बाँट रही है। इतना ही नहीं, कई मध्यवर्गीय परिवारों की युवतियाँ संपूर्ण परिवार के बोझ को स्वयं उठा रही हैं। समय के साथ–साथ हमारी सामाजिक मान्यताएँ भी बदल रही हैं। नारी की घर की चारदीवारी से बाहर निकल कर अर्थोपार्जन करने की स्वतंत्रता तो समाज को मान्य है, परंतु वही नारी जब अपने व्यक्तित्व का स्वतंत्र निर्माण कर जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी इस स्वतंत्रता का उपयोग करना चाहती है तो समाज उसके व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप प्रारंभ कर देता है। उसका जीना तक मुहाल कर देता है। उषा प्रियंवदा के उपन्यास ''पचपन खंभे लाल दीवारें'' की नायिका सुषमा ऐसी ही परिस्थितियों की शिकार कामकाजी आधुनिक महिला है। तैंतीस वर्षीय सुषमा दिल्ली के एक महिला कालेज में इतिहास की प्राध्यापिका है। उसका घर कानपुर में है। पक्षाघात से पीड़ित उसके वृद्ध और रिटायर पिता कुछ भी कार्य करने में असमर्थ हैं। सुषमा की माँ उसके पिता की द्वितीय पत्नी है और सदैव अपनी अतृप्त इच्छाओं का रोना रोती है। सुषमा के छोटे–छोटे भाई–बहन है । इतने बड़े परिवार का बोझ उसने अपने कधों पर उठा रखा है। वह अपने इस परिवार में पूरी रमी हुई है और संतुष्ट भी है तथा भाई–बहन, माता–पिता सबकी इच्छाओं को यथासंभव पूरा करने में लगी हुई है। जीवन के एक नाजुक मोड पर उसका अपने पड़ोसी नारायण से भावनात्मक लगाव हो जाता है। इस प्रथम प्रणय संबंध में उसे असफलता ही मिलती है। उसे ठेस लगती है, पर धीरे–धीरे वह अपने पर नियंत्रण कर लेती है और पारिवारिक दायित्व को निभाना ही अपने जीवन का उद्देश्य मान लेती है। फिर नील उसके जीवन में प्रवेश करता है। नील के स्पर्श से उसके भीतर की प्यासी नारी जाग उठती है और वह सब कुछ भूलकर नील के प्यार में खो जाती है । नील के साथ उसके संबंध समाज में चर्चा का विषय बन जाते हैं। कालेज में, घर में, सारे समाज में उसे एक दुखद–स्थिति का सामना करना पड़ता है । निर्णय की घड़ी आ पहुँची है जब उसे नील अथवा घर–परिवार तथा नौकरी में से एक को चुनना है। नील उसकी जिम्मेदारियों को भी उठाने के लिए तैयार है और उससे विवाह का प्रस्ताव रखता है। परंतु सुषमा अपने पारिवारिक दायित्व को निभाना केवल अपना ही कर्तव्य मानती है । वह नील के प्रस्ताव को ठुकराकर पारिवारिक दायित्व को ही प्रमुखता देती है। अपने भीतर की नारी की बलि चढाकर वह लोकापवाद से बचती है और उसकी नौकरी भी सुरक्षित रह जाती है। सुषमा सुंदर और आकर्षक है। वह अपनी आयु से बहुत छोटी दिखती है। वह मन लगाकर अध्यापन कार्य करती है।

परिवार की जिम्मेदारियों को निभाते हुए सुषमा ने अपनी समस्त इच्छाओं का दमन कर दिया है। जीवन के एक विशिष्ट और नाजुक मोड पर, उन्नीस वर्ष को आयु में उसका अपने पड़ोसी नारायण से भावनात्मक संबंध बन गया था । इसका भावनात्मक प्रतिदान भी उसे नारायण की ओर से भरपूर मिला था। परंतु जब सुषमा की माँ ने उन लोगों के सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रखा तो लड़के की पिता ने स्पष्ट शब्दों में उसे ठुकरा दिया। लड़के के पिता अपने पुत्र का रिश्ता किसी ऊँचे घराने में करना चाहते थे। इससे सुषमा को ठेस पहुँची थी। बहुत दिनों तक उसकी रातें रोते बीती थी। एक तरुण किशोरी का सपना शुरु में ही बिखर गया था। उसके बाद तो माता–पिता ने उसके लिए और कोई उचित वर खोजने का प्रयत्न ही नहीं किया था। सुषमा भी सब कुछ भुलाकर अपनी नौकरी और पारिवारिक उत्तरदायित्वों को सँभालने में लग गई थी ।

सुषमा स्वभाव से सौम्य शिष्ट और संकोची है। अपने विवाह की बातों से मन वह प्रायः झेंप जाती है। ऐसे में झेंप मिटाने को उसका एक ही उत्तर होता है जीवन में बहुत महत्वपूर्ण काम है, सिर्फ विवाह ही तो नहीं। और देशों में देखिए बिना शादी किये ही औरतें कैसे मज़े से रहती है । .ही.मन सुषमा भली भाँति जानती है कि जिस तरह विदेशों में औरतें बिना शादी किए रहती हैं उस तरह वह कभी नहीं रह सकती । वह यदि कहीं गलती से एक भी पुरुष मित्र बना ले, तो सबसे पहले उसकी अपनी माँ ही उसकी खूब खबर लेगी और यह समाज भी उसे जीने नहीं देगा। संकोची स्वभाव के कारण कही गई सुषमा की बातों को ही उसकी माँ सच मानती है और अपनी स्वार्थ सिद्धि करती रहती है। सुषमा की कमाई के सहारे ही घर चल रहा है।

नील को अपने जीवन से बिल्कुल निकाल देने का साहस भी वह नहीं कर पाती है।

नील ने उसके शान्त जीवन में तूफान मचा दिया है। उसके भीतर की प्यासी नारी नील के स्पर्श से जाग उठती है। अपने चंतन की, समाज की, अवहेलन कर वह नील के साथ अपने सम्बन्धों को समरसता में पूर्णतया डूब जाना चाहती है। नील के साथ उसका अनायास ही जो रिश्ता जुड़ गया है, उसकी जड़ें वह अपने भीतर गहराई तक महसूसती है। नील का साथ पाकर सुषमा के भीतर एक नए व्यक्तित्व का जन्म होता है। अब अपने दैनिक कार्यों को निपटाते हुए भी वह आत्मविभोर रहती है। पहले के जीवन की एकरसता से उकताई सुषमा की आँखों में असंख्य सपने बस गए हैः ''उसके हृदय में जैसे एक अलग झरना फूट पड़ा था, जिसके जल से वह सदा सिंचित रहती थी । ''उसके साज–सिंगार में निखार आ गया है। आँखें भीतर की खुशी से चमकने लगी है। यहाँ तक कि अध्यापन कार्य में भी नया उत्साह आ गया है। नील के सामीप्य में कभी कभी सुषमा को यह विचार खटकता है कि भविष्य में नील कभी तो उससे अलग होगा ही । परन्तु अपने दुलमुल स्वभाव के कारण निर्णय कर पाने में असमर्थ सुषमा स्वयं को भाग्य पर छोड़ वर्तमान का भरपूर आनंद लेती है। नील की बाँहों में सिमटकर वह अपनी परिस्थितियों को कुछ समय केलिए भूलकर सपनों की दुनिया में खो जाती है। अपने भीतर की नारी की नैसर्गिक इच्छाओं को वह खुलकर खेलने देती है। सुषमा इस बात से परिचित है कि इसप्रकार की स्थिति अधिक देर तक नहीं चल पाएगी पर एक व्यावहारिक, दुनियादारी में पड़ समझबूझ वाली स्त्री में 114 के समान वह कुछ समय के लिए ही अपने जीवन की एकरसता को दूर कर लेना चाहती है। पर इस क्रम में एक नया बांध उसे तोड़ जाता है ''उसने पाया कि जब उसने नील को अपना शरीर दिया तो साथ में अनजाने ही अपनी भावनाएँ, विचार और हृदय भी समर्पित कर दिए थे। वह अपने व्यक्तित्व को दो इकाइयों में न बाँट सकी। और उसके इस बात की खुशी थी कि वह अपने शरीर से अलग नहीं है । सुषमा भावनाओं की रौ में बह जाती है। घर और समाज में प्रशंसापूर्ण व्यवहार पाने वाली सुषमा अचानक सबकी निगाहों का केन्द्र बन जाती है।

पर अब तो यही अच्छा है कि सुषमा त्यागपत्र दे दे। इस तरह शीघ्र ही उसके सम्मुख नील से अपने सम्बन्धों के विषयम में दो. टूक फैसला करने का समय आ जाता है।

मैं ने अपने को ऐसी जिन्दगी के लिए ढाल लिया है। तुम चले जाओगे तो मैं फिर अपने को उन्हीं प्राचीरों में बंद कर लूँगी।''

वह प्रिंसिपल के पास जाकर क्षमा याचना करती है। प्राविडेंड फंड से रुपया उधार लेकर छोटी बहन का विवाह करती है।

नील से संबंध तोड़ देने के लिए उसके सभी परिचित उसकी प्रशंसा करते नहीं थकते हैं। उसे भली युवती कहा जाता है। समाज के सम्मुख सुषमा अपना संयत रूप ही प्रस्तुत करती है जैसे नील उसका परिचित मात्र था और उसके चले जाने से उसे कुछ विशेष अंतर नहीं पड़ता। परंतु वह तो उसकी सखी मीनाक्षी ही जानती है कि सुषमा अपने भीतर कितना झेल रही है। अपनी इच्छाओं, सहज प्रवृत्तियों और महत्वाकांक्षाओं को भूलकर जब वह पूरी तरह से टूट जाती है तो समाज उसका टूटना न देखकर वाहवाही करता है। उसके समाज–सम्मत व्यवहार की भूरि–भूरि प्रशंसा करता है, जिसका सुषमा के लिए कोई महत्व नहीं है। एक दिन अचानक सुषमा को किसी से सूचना मिलती है कि एक दिन बाद ही नील

हालैंड जा रहा है, पर नील उससे मिलने नहीं आता। उसी दिन सुषमा के कालेज में हिस्ट्री एसोसिएशन का वार्षिक उत्सव है, जिसमें वह बुरी तरह व्यस्त हैं। शीघ्र ही वह लोगों से क्षमायाचना कर घर लौट आती है। अपनी सखी मीनाक्षी से वह एयरपोर्ट के लिए टैक्सी मँगाने को कह देती है। स्वयं तैयार होकर पर्स में सारे रुपए भर लेती है। पर टैक्सी के आने पर उसका इरादा बदल जाता है। वह हाथ का पर्स फेंक अपनी सखी से टैक्सी लौटाने को कहकर निढाल हो बिस्तर पर गिर पड़ती है।

उषा प्रियंवदा ने ''पचपन खम्भे लाल दीवारे'' में सुषमा जैसी मध्यवर्गीय नारी के संघर्षों का चित्रण मनोवैज्ञानिक धरातल से किया है। इसमें मनोविज्ञान के निम्नलिखित तथ्य अन्तर्निहित है।

अन्तर्द्वन्द्व

''पचपन खम्भे लाल दीवारें'' उपन्यास में भारतीय परिवेश की एक युवती की मनोव्यथा का मार्मिक चित्रण किया है। यह एक नौकरी पेशा युवती सुषमा की दर्द भरी द्वन्द्वात्मक कहानी है । वह परिवार की खातिर जिन्दगी भर मानसिक यन्त्रणा भांगती रहती है। यद्यपि उसके मन में भी प्यार की उमंग है, शादी की कल्पना है, एक घर की इच्छा है, लेकिन उसके ऊपर पारिवारिक जिम्मेदारियाँ होने के कारण वह अपनी इच्छाओं का गला घोंट देती है। इसमें प्रियम्बदा जी ने सुषमा के अन्तर्द्वन्द्व का बखूबी चित्रण किया है। नील के साथ एक सुन्दर जीवन बिताना उसका अन्तर्मन चाहती है। फिर भी सामाजिक जिम्मेदारियाँ उसे उससे दूर हटाती है। ऐसी अवस्था में उसका मन अर्न्दद्वन्द्व से गुज़रती है। उसने अपने परिवार के लिए अपने को होम कर दिया ।

''मेरी जिन्दगी खत्म हो चुकी है। मैं केवल साधन हूँ। मेरी भावना का कोई स्थान नहीं है। विवाह करके परिवार को निराधार छोड देना मेरे लिए संभव नहीं। मैं ने अपने को ऐसी जिन्दगी केलिए ढाल लिया है। तुम चलो जाओगे तो मैं फिर अपने को उन्हीं प्राचीरों में बंद कर लूँगी।

कुंठा

जीवन की भाग दौड और आजीविका के चक्कर में सुषमा के सुनहरे यौवन के दिन चुपचाप विलीन हो जाती है । विवाह की आयु धीरे–धीरे बीत रही है और सुषमा कुंठाओं से ग्रस्त हो रही है । पारिवारिक दायित्व, पद की गरिमा और अनेक कुंठाओं में उसका व्यक्तित्व कैद होकर रह गया है। कालेज की व्यस्तता और वार्डनशिप की जिम्मेदारियों के बीच वह अपने असितत्व को भुलाने का हर संभव प्रयास करती है। पर अकेले होने पर, रात के अँधेरे में कोई कमी उसे खलने लगती है। उसका मन डूबने लगता है। तब अपने परिवार का सारा बोझ अकेले उठानेवाली सुषमा को लगता है कि दो बाँहों का सहारा उसे भी चाहिए। प्यार के दो मीठे बोला की आवश्यकता उसे भी है। सुषमा को कई बार पिताजी पर गुस्सा आता है कि यदि वे चाहते तो उसका विवाह वकील के लड़के से कर सकते थे । पर उस समय वे चुप लग गये। उसके मन में पिता के प्रति कहीं आक्रोश भी है। ''क्या माँ–बाप दहेज देकर ''अपनी बेटी की शादी नहीं करते'' छोटी बहन की शादी क्या बिना दहेज के होगी।

दमन; दमितवासनाद्ध.

परिवार की जिम्मेदारियों के निभाते हुए सुषमा ने अपनी समस्त इच्छाओं का दमन कर दिया है। जीवन के एक विशिष्ट और

नाजुक मांड पर, उन्नीस वर्ष की आयु में उसका अपने पड़ोसी नारायण से भावनात्मक संबंध बन गया था । इसका भावनात्मक प्रतिदान भी उसे नारायण की ओर से भरपूर मिला था। परंतु जब सुषमा की माँ ने उन लोगों के सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रखा तो लड़के के पिता ने स्पष्ट शब्दों में उसे ठुकरा दिया। लडके के पिता अपने पुत्र का रिश्ता किसी ऊँचे घराने में करना चाहते थे। इससे सुषमा को ठेस पहुँची थी। बहुत दिनों तक उसकी रातें रोते बीती थी । एक तरुण किशोरी का सपना शुरु में ही बिखर गया था । उसके बाद तो माता–पिता ने उसके लिए और कोई उचित वर खोजने का प्रयत्न ही सुषमा भी सब कुछ भुलाकर अपनी नौकरी और पारिवारिक नहीं किया था।

अकेलापन

उषाप्रियंवदा ने सुषमा की वेदना का चित्रण भी बहुत गराई से किया है। वह अपना सब कुछ दूसरों पर लुटाती रहती है। खाली होती जाती है और अकेलेपन का अहसास उसे तोड़ता जाता था। उसकी जिन्दगी में कहीं कोई भी न या जिसके साथ वह शेयर करती। माँ समझती कि बेटी सुखी है। अतः वह उसकी ज़रा भी परवाह न कर अपने दूसरे बच्चों के बारे में ही सोचती रहती । सुषमा प्राय उपेक्षित सा अनुभव करने लगती थी । वह चाहती थी की माँ उसके जीवन में आ गये विखराव को कुछ तो समझने का प्रयत्न करे। वैसे वह सबसे दूर अलग रहकर दिल्ली में नौकरी करती थी। अकेले ही । तब उसे अपने अकेलेपन का अहसास बडी तीव्रता से होता था । ''सुषमा को प्रेमी नहीं चाहिए था। उसे पति की आकांक्षा भी न थी, पर कभी–कभी उसका मन न जाने क्यों डूबने लगता। अपने परिवार का बोझ अपने ऊपर लिये सुषमा काँपने लगती । तब भी वह चाह उठती कि दो बाँहें उसे भी सहारा देने को हो, उस नीरवता में कुछ अस्फुट शब्द उसे भी सम्बोधन करें।''

इलक्ट्रा कांप्लेक्स से अभिभूत राधिका

रुकोगी नहीं राधिका की राधिका की दुविधा एक ऐसी भारतीय नारी की दुविधा है जो अपनी दिशा तय नहीं कर पा रही है। वह अपने वैयक्तिक स्वतंत्रता लड़ती है। राधिका ने बचपन से, माँ के चल बसने के बाद से, अकेलेपन को जाना है कि वह कितना भयावह होता है। इसलिए वह अपने पिता से इतना जुड़ गयी है कि उन्हें ही अपनी जीवन की धुरी मानने लगी है। इसीलिए जब पिता विधा से विवाह कर लेते है तो वह अपने की निराधार निर्वारित सा समझने लगती है। यही कारण है कि वह एक विदेशी पत्रकार डैन के साथ भारत छोड़कर अमेरिका चली जाती है। वहाँ एक साथ उसकी संरक्षण में रहती है, परन्तु बाद में किन्हीं कारणों से जब उनके सम्बन्धों में तनाव आ जाता है तो वह अलग हो अपनी कलात्मक सम्भावनाओं को विकसित करने का प्रयास करती है। भारतीयता उसकी नस–नस में भरी हुई है। इसीलिए वह कई बार सोचती है कि ''कैसा होगा वह देश, जहाँ लांग इतनी आसानी से साथी बदल लेते है। (क्या रिक्ति हृदय में कचोटती नहीं रहती)

डॉ. नरेन्द्र मोहन द्वारा सम्पादित ''आधुनिक हिन्दी उपन्यास में वे लिखते है कि श्राधिका दो सस्कृतियों के पाटों में पिसकर अनिर्णय और अकेलेपन को झेलती है। वह दोनों सस्कृतियों विदेशी और देशी में मिसफिट होकर रह जाती ।

रज्जु मामा के डैन से शादी करने के सुझाव पर वह कहती है कि ''कोई सवाल ही नहीं उठता था । उन्होंने मुझे विदेश जाने में मदद की थी। राधिका जिन्दगी को काफी व्यावहारिक रूप में लेती है। इसीलिए अमेरिका पहुँचकर जब उसने डैन के साथ नहीं बनती तो वह अकेली रहती है। जो ठान लेती है, वही करती है। वह अपने ऊपर समाज, परिवार किसी का दबाव महसूस नहीं करती।'' वह हीन भावना से भी पीड़ित है। उसे इस उम्र में अपने पिता के विद्या से विवाह करना अच्छा नहीं लगता। वह भी उन्हें मानसिक आघात पहुँचाना चाहती है। यही कारण है कि विदेश चली जाती है। वह हर किसी में अपने पिता का प्रतिबिम्ब ढूँढती है। वह कहती भी है कि ''मुझे युवा पुरुष सभी अपरिपक्व लगते है।

इन्द्रनाथ मदान अपनी पुस्तक ''हिन्दी उपन्यास रू एक नयी दृष्टि'' में कहते हैं कि इस उपन्यास में एक तरफ.पिता–पुत्री में अनुराग का तनाव है और दूसरी तरफ मनीश अक्षय के बीच डोलने की स्थिति का तनाव है जो अनिश्चितता और सारहीनता के बोध को गहराती है। वह अपने परिवेश से कटा हुआ पाती है। आखिर वह मनीश के बारे में तय कर लेती है। लेकिन असली तनाव पिता–पुत्री के सम्बन्ध में है।'' जब पिता कहते है कि मैंने अपने बारे में कुछ सोचा नहीं है। चाहता हूँ कि तुम यहाँ रहा राधिका, पहले की तरह। कुछ देर के बाद अँधेरे में उसका जवाब नहीं पापा.... मैं जाना चाहती हूँ। मनीश मेरे एक बंधु।'' यद्यपि. अक्षय उसके लिए उचित वर है, वह जानती है । फिटले. बॉय मनीश को वह जीवन–साथी के रूप में चुनकर भी अपने पिता को एक तरह से चोट ही पहुँचाना चाहती है।''

राधिका एक तरह से आधुनिक जिन्दगी में रुढ़िमुक्त नारी के अपने ही आवर्त में घूमते रहने की दारुण स्थिति का बोध कराती है, न वह पुरानी मान्यताओं की ओर लौट सकती है, न आधुनिक जीवन के चम्करदार रास्ते पर अपना निश्चित मार्ग ढूँढ़ पा रही है।

इलक्टा कांप्लेक्स

उषा प्रियंवदा के उपन्यास श्रुकोगी नहीं, राधिका'' की राधिका एक मध्यवर्गीय युवती है। अपने अस्तित्व और स्वतंत्रता की खोज में वह न जाने कहाँ–कहाँ भटकती है। माँ के निधन के पश्चात् उसका जीवन पिता के संरक्षण में व्यतीत हुआ है। एकनिष्ठ रूप में पिता के प्यार पाकर राधिका पिता पर एकाधिकार समझती है। पिता के प्रति उसका असाधारण झुकाव है। पिता के प्रति इस झुकाव को वह बदलने की कोशिश नहीं करती है। अतः विमाता विधा को वह अपना निकटतम प्रतिद्वन्द्वी मान बैठती है। अपने पिता के साथ रात को स्टडी रूम में काम करते हुए वह आंतरिक पुलक से भर उठती है कि इस समय विधा का पति उसके साध हैरू श्रात्रि के प्रथम पहर में पापा की स्टडी में काम करते हुए राधिका को यह ज्ञान भली भाँति रहता है कि विधा अपने कमरे में अकेली है। उन्हें इससे थोड़ा सा सुख होता है।''

राधिका के मित्र डैन के अनुसार वह हर पुरुष में प्रेमी नहीं, पिता को खोजती है। वह उसे हिमकन्या. सी जमी हुई और संगमरमर की प्रतिमा कहकर चिढ़ाता है। वस्तुतः इस स्थिति के पीछे राधिका का ''इलेक्ट्रा कांप्लेक्स'' है । वह हर पुरुष में पिता की छवि स्थापित करना चाहती है। यही उसकी काम–जड़ता या शीतलता का कारण है। तनाव से मुक्ति पाने के लिए वह विदेश में एक उन्मुक्त, स्वच्छंद जीवन जीती है, लेकिन चरम सुख नहीं पाती है। वह स्वतंत्र है, परिपक्व भी और अपना जीवन, अपना भविष्य, खुद गढ़ना चाहती है। उसके जीवन में कई पुरुष आते है, पर किसी के साथ भी वह स्थायी संबंध नहीं बना पाती है। वह एक ऐसा सगी चाहती है जिसमें स्थिरता और औदार्य हो, जो उसे उसके सारे अवगुणों सहित स्वीकार कर ले। मनीश उसे पूर्ण रूप से स्वीकारना चाहते है उसके विगत सहित । अपनी पितृ. ग्रंथि से वह मनीश के कारण ही मुक्त हो पाती है। मन–ही–मन उसके साथ रहने के बारे में तय कर लेने पर ही वह पिता, द्वारा यह कहने पर ''तुम यहाँ रहो राधिका'' वह स्पष्ट उत्तर दे पाती है, नही पापा, मैं जाना चाहती हूँ। मनीश..... मेरे एक बंधु.....

द्वन्द्व

उपन्यास का कथानक राधिका के जीवन से घिरा हुआ है। राधिका अपने पिता को बहुत प्यार करती है और अरसे से उनसे

जुड़ी हुई है। लेकिन विधुर का जीवन जीते–जीते उसके पिता त्रस्त हो जाते हैं और अपने एकाकीपन को खंडित करने केलिए राधिका की सहेली से विवाह कर लेते है। राधिका पिता के इस नये जीवन का सहन नहीं कर पाती। उसे एक गहरा धक्का लगता है। उसकी मित्र उसकी नयी माँ यद्यपि उससे अत्यधिक स्नेह और आत्मीयता से मिलना चाहती है लेकिन राधिका अपने पिता को, जीवन के क्षणों को किसी अन्य के साथ बाँटते नहीं देख सकती। असहनीय मानसकि द्वन्द में वह ''डैन'' नाम के पुरुष के साथ अमेरिका चली जाती है। लेकिन यहाँ आकर डैन उसे असंतोष और टूटन देता है इसलिये शिक्षा समाप्त कर वह भारत वापस आ जाती है। उसका प्रयत्न है कि वह अपने पिता के पास रहकर पुराने सम्बन्धों का भरपूर निर्वाह करे, परन्तु ऐसा नहीं हो पाता। राधिका अपने पिता के अनुरागपूर्ण सम्बन्धों में गहरा तनाव पाती है और अन्त में सुरक्षा और प्यार पाने के लिए मनीष और अक्षय के बीच डोलने लगती है। प्रत्येक स्थिति में अकेलेपन का एहसास राधिका के तोड़ता चला जाता है और वह पिता के साथ रहना भी अस्वीकार कर देती है। पिता के चाहने पर भी वह रुकती नहीं। और कहती है, ''पापा मैं जाना चाहती हूँ, मनीष मेरे एक बन्धु है।''

मानसिक द्वन्द्ववाली अनु

1984 में प्रकाशित शेषयात्रा उषाप्रियंवदा का तीसरा उपन्यास है। रचनाकार के व्यक्तित्व विकास के इस पहलू में तलाक के बाद आत्महत्या का सहारा न लेकर एक नयी जिन्दगी की शुरुआत करने वाली अनुका की कथा प्रस्तुत करती हैं। अनुका एक मध्यवर्गीय परिवार की लड़की है। माँ बाप की मृत्यु के बाद मामा. मामी द्वारा निर्धारित जीवन काटने को वह बाध्य हो जाती है। अनुका के रिश्ते की दीदी से शादी करने आये डॉ. प्रणवकुमार अनुका के सौन्दर्य से आकर्षित होता है और उससे शादी करता है। शादी के बाद प्रणव अनुका को लेकर विदेश चला जाता है। अपरिचित वातावरण से किसी न किसी तरह से मेल खाने के प्रयत्न करने पर अनुका को कई स्तरों पर मानसिक द्वन्द्व होता है। यह द्वन्द्व उस संदर्भ में और भी बढ़ जाता है जब प्रणव धीरे. –धीरे अनुका के हर काम में कोई कमी ढूँढ निकालता है। माँ बनने की अनुका की इच्छा को भी प्रणव ठुकराता है। उपन्यास के द्वारा उषा प्रियंवदा ने यह व्यक्त किया कि परिवेशगत बदलाव के अनुसार नारी के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन हुआ।

संदर्भ सूची

1. उषा प्रियवंदा, पचपन खंभे लाल दीवारे,
2. उषा प्रियंवदा, रुकोगी नहीं राधिका, पृ. 36
3. डॉ. स्वर्णलता, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास साहित्य की समाज शास्त्रीय
   पृष्ठभूमि, पृ. 58
4. डॉ. इन्द्रनाथ मदान, हिन्दी उपन्यासः एक दृष्टि, पृ. 87
   पृ. 26, पृ. 10
5. डॉ. घनश्याम मधुप, हिन्दी के लघु उपन्यासकार और उनके लघु उपन्यास, पृ. 179
6. कृष्णा सोबती, मित्रो मरजानी, पृ. 20